REVIEW OF RESEARCH
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF) UGC APPROVED JOURNAL NO. 48514 ISSN: 2249-894X
VOLUME - 8 | ISSUE - 7 | APRIL - 2019

वैश्विक पर्यावरण सन्तुलन में प्राचीन भारतीय संस्कृति का योगदान।

Dr. Sarita Sharma[1] and Sandeep Kumar[2]
[1]Reader in CTE, Ex-Head, Department of Education,
Ex-Dean Edu. IASE Deemed University, Sardarshahar, Churu (Rajasthan) .
[2]Research Scholar , (Ph.D. Education) IASE Deemed University, Sardarshahar, Churu (Raj.)

शोध सारांश

पर्यावरणीय समस्याएं उस जमाने से चर्चाओं का विषय हैं जब ये समस्याएं विश्व के कुछ ही औद्योगिक राष्ट्रों तक सीमित थी, परंतु आज ये समस्याएं वैश्विक रूप धारण कर चुकी हैं और चर्चाओं से ऊपर उठकर इन्होंने गंभीर मुद्दों का रूप ले लिया है। पर्यावरणीय समस्याओं की गंभीरता को इस बात से भी समझा जा सकता है कि आज विश्व की 100% आबादी पर्यावरण असंतुलन जन्य खतरों के मुहाने पर बैठी है। ऐसे खतरे जो प्रकृति जनित और पर्यावरण जनित हैं लेकिन जिनके पीछे प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से मानव एवं मानवीय क्रियाएं विद्यमान हैं। उदाहरणार्थ :- ग्लोबल वार्मिंग, सुनामी एवं महासागरों में पैदा होने वाले तूफान, भूमिगत जल में कमी, जैव विविधता में ह्रास, ओजोन का नष्ट होना, मरुस्थलीकरण, भूमि की उर्वरता में कमी आना, अम्लीय वर्षा, अतिवर्षा, ओलावृष्टि, अत्यधिक सूखा, भूकम्प, भूस्खलन इत्यादि।

उपरोक्त एक भी आपदा किसी राष्ट्र तक सीमित नही है बल्कि सम्पूर्ण विश्व ही इसकी ज़द में आ चुका है। लेकिन विडंबना यह है कि मानव जाति न तो पर्यावरण संतुलन के प्रति जागरूक है और न ही इन आपदाओं से प्राणी मात्र को बचाने का कोई ठोस उपाय हमारे पास है। अगर मानवीय क्रियाओं की बात करें तो आप देखेंगे कि मनुष्य अपने स्वार्थ के वशीभूत होकर प्रकृति और पर्यावरण को निरन्तर क्षति पहुंचा रहा है, जबकी इसके दुष्परिणामों को वह भली भांति जानता है, परन्तु जागरूकता एवं शिक्षा के अभाव में वह इस कृत्य को निरन्तर करता आ रहा है। आज विश्व के अनेक राष्ट्रों की सरकारें, अनेक सरकारी एवं गैर सरकारी संगठन व्यक्तिगत या सामूहिक प्रयासों के द्वारा पर्यावरणीय समस्याओं का समाधान खोजने और संतुलन बैठाने का प्रयास कर रहे हैं, लेकिन सारे प्रयास नाकाफी साबित हो रहे हैं। अब ऐसी परिस्थिति में यदि इतिहास के उन पन्नो को पलटा जाये जब विश्व की प्राचीनतम और सम्पन्न सभ्यताएं अस्तित्व में थीं और उन सभ्यताओं को कभी भी पर्यावरणीय समस्याओं का सामना नही करना पड़ा, तब हम पाएंगे कि भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता ने जहाँ एक ओर विश्व की महानतम संस्कृति होने का गौरव हासिल किया वहीं दूसरी ओर पर्यावरण के साथ अद्भुत तालमेल बनाकर रखा। भारतीय संस्कृति में ऐसे अनेक उदाहरण विद्यमान हैं जिनसे सिद्ध होता है कि भारतीय संस्कृति ने न तो कभी पर्यावरण को क्षति पहुंचाई है और न ही किसी मानव सभ्यता को पर्यावरण का ह्रास करने की प्रेरणा दी, बल्कि भारतीय संस्कृति ने ऐसे अनेक सिद्धान्त विकसित किये जो मनुष्य को प्राकृतिक संसाधनों की सुरक्षा, संरक्षण एवं संवर्धन के लिए प्रेरित एवं उत्साहित करते हैं। वर्तमान परिवेश में मनुष्य के अन्दर स्वार्थपूर्ति का भाव पैदा हो गया है, अब ये भाव हमारे अन्दर आया कहाँ से ? ये हम

सब जानते हैं। लेकिन इस लोक-अहितकारी भाव के कारण हम भारतीय संस्कृति द्वारा विकसित एवं शास्त्रों में वर्णित इन सिद्धान्तों पर हंसते हैं और उन्हें मज़ाक का पर्याय बनाते हैं। ऐसे में जब हम पर्यावरण सन्तुलन बैठाने और विश्व को अनचाहे खतरों से बचाने में प्रत्येक मोर्चे पर विफल हो रहे हैं तो भारतीय संस्कृति के उक्त शास्वत सिद्धान्तों और मूल्यों को आत्मसात करने में कोई घाटे का सौदा नही है।

की वर्ड्स:- पर्यावरण, भारतीय संस्कृति, अध्यात्म, औद्योगीकरण, प्रकृति, जलवायु।

शोध पत्र

हमारे सौर मंडल में एकमात्र रहने लायक स्थान पृथ्वी ही है और इस ग्रह को जो तत्व रहने योग्य और जीवन को फलने-फूलने योग्य बनाता है वह तत्व है इस ग्रह का पर्यावरण। सृष्टि के प्रारंभ से ही इस ग्रह का पर्यावरण जीवन को संरक्षण देता आ रहा है, लेकिन पर्यावरण हजारों ऐसे घटकों का योग है जिनका संरक्षण करना इस ग्रह के प्राणियों का परम दायित्व है। पृथ्वी पर सबसे ज्यादा विकसित व विवेकवान प्राणी मनुष्य ही है। अतः मनुष्य का यह पहला कर्तव्य है कि वह पर्यावरण के सभी घटकों का संरक्षण व संवर्धन करे, परंतु वर्तमान परिदृश्य में देखें तो मानवीय क्रियाएं ही पर्यावरण को सर्वाधिक हानि पहुंचा रही हैं। औद्योगिकरण के बाद से तो हम अपने पर्यावरण के साथ शत्रुवत व्यवहार कर रहे हैं। परिणामस्वरूप संपूर्ण विश्व आज पर्यावरण असंतुलन जनित आपदाओं को झेल रहा है। जैसे:-ग्लोबल वार्मिंग, सुनामी एवं महासागरों में पैदा होने वाले तूफान, भूमिगत जल में कमी, जैव विविधता में ह्रास, ओजोन का नष्ट होना, मरुस्थलीकरण, भूमि की उर्वरता में कमी आना, अम्लीय वर्षा, अतिवर्षा, ओलावृष्टि, अत्यधिक सूखा, भूकम्प, भूस्खलन इत्यादि। उपरोक्त एक भी आपदा किसी राष्ट्र तक सीमित नही है, बल्कि सम्पूर्ण विश्व ही इसकी ज़द में आ चुका है। लेकिन विडंबना यह है कि मानव जाति न तो पर्यावरण संतुलन के प्रति जागरूक है और न ही इन आपदाओं से प्राणी मात्र को बचाने का कोई ठोस उपाय हमारे पास है। अगर मानवीय क्रियाओं की बात करें तो आप देखेंगे कि मनुष्य अपने स्वार्थ के वशीभूत होकर प्रकृति और पर्यावरण को निरन्तर क्षति पहुंचा रहा है, जबकी इसके दुष्परिणामों को वह भली भांति जानता है। अब ये भाव हमारे अन्दर आया कहाँ से? ये हम सब जानते हैं। आज वस्त्रों से लेकर खानपान तक, उत्पादन से लेकर उपभोग तक, समझने से लेकर विचारने तक, विकास से लेकर विनाश तक सभी कुछ पाश्चात्य तौर-तरीकों से ग्रस्त है।

वहीं अगर भारतीय संस्कृति की बात करें तो भारतीय संस्कृति विश्व की प्राचीनतम और समृद्ध संस्कृतियों में से एक है। विश्व के अनेक देशों की संस्कृति हमारे पूर्वजों द्वारा पोषित की गई हैं। विश्व के अनेक देशों को सभ्यता का ज्ञान भारतीय संस्कृति से प्राप्त हुआ है। लेकिन दुर्भाग्यवश आज भारतीय संस्कृति अपने ही घर में उपेक्षित होकर रह गई है। समय का चक्र साक्षी है कि भारतीय संस्कृति ने विश्व सभ्यता का नेतृत्व किया है। अनेक प्राकृतिक एवं भौतिक समस्याओं का समाधान भारतीय संस्कृति ने विश्व को दिया है। लेकिन पश्चिम की स्वार्थी हवाओं ने संपूर्ण विश्व को अविवेकी बना दिया है।

आज विश्व के अनेक पूंजीवादी देश केवल इस प्रतियोगिता में लगे हुए हैं कि कौन पर्यावरण को अधिक हानि पहुंचाता है। गत शताब्दी में इन पूंजीवादी राष्ट्रों ने पर्यावरण को जितनी क्षति पहुंचाई है शायद ही किसी और कालखंड में किसी और संस्कृति ने पहुंचाई होगी, और विडंबना देखिए कि लगभग संपूर्ण विश्व ही उन पूंजीवादी राष्ट्रों के मोहपाश में बंधा हुआ है, और जाने-अनजाने पर्यावरण को क्षति पहुंचा रहा है। भारत में तो स्थिति यहां तक आ गई है कि आधुनिकता के नाम पर हम अपनी परंपराओं और रीति-रिवाजों का भी मजाक उड़ाने लगे हैं, जबकि हमारे ग्रंथों और शास्त्रों में वर्णित प्रत्येक तथ्य पूर्ण वैज्ञानिक

और पर्यावरण हितैषी है। भारतीय संस्कृति मानव और प्रकृति के बीच एक अटूट रिश्ता कायम करती है, क्योंकि यहां प्रकृति के प्रत्येक अंग को देवता तुल्य मानकर उसकी पूजा अर्चना की जाती है।

ऋग्वेद में लिखा है कि:-

"धोर्मे पिता जनिता नाभिरत्र बन्धुर्मे माता पृथिवी महीयम्"

अर्थात् आकाश मेरे पिता हैं, बंधु वातावरण मेरी नाभि है और यह महान पृथ्वी मेरी माता है।

अथर्ववेद में लिखा है कि:-

"माता भूमि: पुत्रो अहं पृथिव्या"

अर्थात यह धरती हमारी माता है और हम इसके पुत्र हैं।

इस प्रकार का भाव केवल सनातन संस्कृति ही प्रकट करती है। भारतीय संस्कृति जल को भी अमृत के समान मानती है, क्योंकि वह जीवनदायी होता है। वायु को भी देवता के रूप में पूजा जाता है। वृक्षों में देवताओं का वास माना जाता है, क्योंकि यह हमें औषधि और भोजन के साथ-साथ शुद्ध हवा भी देते हैं। सभी जीवो में ईश्वर का वास माना जाता है, क्योंकि सभी जीव प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से मानव के लिए हितकारी हैं या किसी ना किसी रूप से पारिस्थितिकी तंत्र में अपना योगदान देते हैं। फिर वह चाहे घर में पाली जाने वाली गाय हो या जंगल में रहने वाला मांसाहारी शेर, आकाश में उड़ने वाले पक्षी हों या जमीन में रहने वाले कीट, यह सभी पर्यावरण संतुलन बनाने में निरंतर लगे रहते हैं। अब यदि पर्यावरण के किन अंगों के साथ हमारा भावनात्मक रिश्ता होगा तो हम स्वाभाविक रूप से उनको सम्मान देंगे और उनकी रक्षा भी पूरे मनोयोग से करेंगे, जिसकी शिक्षा हमें भारतीय संस्कृति देती है। लेकिन विश्व की अधिकांश संस्कृतियां मानव और प्रकृति के बीच इस प्रकार के भावनात्मक सम्बन्ध का संदेश नहीं देती वरन उपभोगवाद की प्रेरणा देती हैं। उनके लिए प्रकृति प्रदत्त प्रत्येक वस्तु केवल उपभोग के लिए है और हमारी यही उपभोगवादी मानसिकता मानव सभ्यता को अनजाने खतरों की ओर ले जा रही है।

वायु के प्रति हमारी संवेदनहीनता और समाधान:-

चलिए कुछ वर्तमान घटनाओं की चर्चा करते हैं।

कुछ समय पूर्व पूरा उत्तर भारत घने धुएं की चपेट में था। दिल्ली लखनऊ चंडीगढ़ जैसे बड़े शहरों में तो सड़कों पर दिखाई देना भी बंद हो गया था। जब हवा की गुणवत्ता को जांचा गया तो पता चला कि सभी बड़े शहरों और खासकर NCR में AQI (Aor quality index) 450 से 500 के बीच है, जबकि सांस लेने के लिए आदर्श AQI शून्य से 50 के बीच होता है। 150 से ऊपर का AQI स्तर स्वास्थ्य के लिए हानिकारक माना जाता है। अब आप अंदाजा लगा लगा सकते हैं कि प्रदूषण की स्थिति कितनी भयावह हो चुकी हैं। अगर आप विश्व के सभी बड़े शहरों का AQI चैक करते हैं तो अधिकांश इस Index पर सफल नहीं हो पाएंगे। यह बढ़ता हुआ AQI एक ओर कई तरह की फेफड़ों एवं सांस संबंधी बीमारियां पैदा करता है वहीं दूसरी ओर ग्लोबल वार्मिंग को जन्म देता है। WHO के आंकड़े उठाकर देखें तो पता चलेगा कि पूरे विश्व में प्रदूषित हवा में सांस लेने से 1 वर्ष में लगभग 46 लाख लोग मर जाते हैं। इसके पीछे उद्योगों द्वारा, सड़कों पर दौड़ती गाड़ियों द्वारा, घरों में लगे AC द्वारा, जंगलों में लगाई गई आग द्वारा उत्सर्जित गैस उत्तरदायी हैं।

इस गंभीर समस्या के समाधानार्थ वैश्विक स्तर पर ठंडे कमरों में बैठकर गर्म चर्चा तो जरूर होती हैं, लेकिन धरातल पर कोई ठोस कदम नहीं उठाया जाता। इंसान के व्यक्तिगत प्रयासों की बात करें तो हम लोग उपभोक्तावादी मानसिकता से ग्रस्त होकर पेड़ लगाने की बजाय अपने घर में Electronic Aur Purifier लगा लेते हैं। बढ़ते हुए औसत वैश्विक तापमान से

बचने के लिए AC लगा लेते हैं, और यह भूल जाते हैं कि AC हमारे कमरे के तापमान को तो कम कर रहा है लेकिन औसत वैश्विक तापमान को बढ़ा रहा है।

यहां पर भारतीय संस्कृति की भूमिका की बात करें तो यह हमें वृक्षारोपण के लिए प्रेरित करती है। यह पीपल, बरगद, नीम, केला जैसे वृक्षों को पूजनीय इसलिए मानती है क्योंकि यह प्राकृतिक Air Purifier हैं। मुझे अपने बचपन की बातें याद हैं, जब हम घर या खेतों में अपने आप उगाई घास या छोटे पेड़ों को काटते थे तो हमारे दादा या दादी कहते थे कि बेटा पीपल को मत उखाड़ना उसमें भगवान होते हैं। हमने भी बाल-स्वभाव में यह स्वीकार कर लिया कि पीपल में भगवान होते हैं। उस समय जहां-तहां पीपल के पेड़ उगे रहते थे। जब थोड़ा समझदार हुए तो लोगों ने बताया कि भगवान किसी पेड़ में कैसे रह सकते हैं यह सब दकियानूसी और अंधविश्वास की बातें हैं और परिणाम यह हुआ की पीपल का पेड़ सहज रूप से दिखाई देना बंद हो गया। जब थोड़ा और समझदार हुए और भारतीय संस्कृति को तर्क एवं विज्ञान की कसौटी पर परखा तो पाया कि जब तक पीपल में भगवान थे तब तक पीपल थे, और जब यह मान्यता दकियानूसी हुई तो पीपल भी कम हो गए। सम्बन्ध भले ही काल्पनिक था पर व्यवहारिक रूप से महत्वपूर्ण था। अगर विश्व का प्रत्येक नागरिक वृक्षों से ऐसा ही कोई भावनात्मक सम्बन्ध बना ले तो यकीन मानिए हमें किसी Electronic Air Purifier या AC की आवश्यकता नहीं पड़ेगी। रही बात उद्योगों की तो भारतीय संस्कृति ने हथकरघा एवं कुटीर-उद्योगों को प्रोत्साहित किया है, जो पूरी तरह से पर्यावरण हितैषी हैं। लेकिन उपभोगवाद और औद्योगीकरण ने मशीनों और बड़े कारखानों को जन्म दिया जो वायु प्रदूषण का एक बड़ा कारक है। इसके अतिरिक्त सड़कों पर दौड़ती बेहिसाब गाड़ियां पूंजीवाद और हमारी विलासी प्रवृत्ति की देन हैं। इन गाड़ियों के धुए ने शहरों की हवा को जहरीला बना दिया है। आज प्रत्येक व्यक्ति एकल परिवार में रहना पसंद करता है, और प्रत्येक सदस्य अपनी व्यक्तिगत गाड़ी रखना चाहता है, परिणाम यह है कि घर में 4 सदस्य हैं तो 4 ही गाड़ियां हैं।

जबकि भारतीय संस्कृति सामूहिक परिवार की पक्षधर है। जिस समाज में सामूहिक परिवार की परंपरा होती है प्रायः वहां यातायात के सार्वजनिक साधनों का प्रयोग अधिक होता है और निजी वाहनों का भी सामूहिक प्रयोग सम्भव होता है।

जल के प्रति हमारी संवेदनहीनता और समाधान:-

हम सभी ने समाचार पत्रों के माध्यम से अक्सर पड़ा होगा कि किसी कारखाने में रसायनों का रिसाव होने से उसके आसपास के क्षेत्रों का भूमिगत जल दूषित हो गया है और उस जल को पीने से अनेक लोगों की अकाल मृत्यु हो गई या कैंसर जैसी भयानक बीमारी फैल गई। विश्व में ऐसे अनेक औद्योगिक शहर हैं जहां का पानी पीने योग्य नहीं है। दूसरी ओर कृषि में बहुतायत से प्रयोग किया जाने वाला रासायनिक उर्वरक भूमि की उर्वरता को तो कम करता ही है, साथ ही साथ भूमिगत जल को भी जहरीला कर देता है। ज्यादा दूर जाने की आवश्यकता नहीं है हमारे देश का पंजाब प्रांत रासायनिक उर्वरकों की खपत में देश में प्रथम स्थान पर है उसका परिणाम यह है कि पंजाब के कई शहर एवं गांव में कैंसर रोगियों की संख्या देश में सर्वाधिक है। जल प्रदूषण और मृदा प्रदूषण की इस गंभीरता का पता इस बात से चलता है कि पंजाब में कैंसर रोगियों के लिए एक विशेष रेल चलाई गई है और उसका नाम भी कैंसर एक्सप्रेस रखा गया है। WHO के आंकड़े देखें तो दुनिया में प्रति वर्ष 4 लाख 85 हजार लोग दूषित पानी के सेवन से होने वाली बीमारियों जैसे डायरिया हैजा टाइफाइड आदि से ग्रस्त होकर मर जाते हैं। सन 2025 तक दुनिया की 50% आबादी पेयजल की समस्या से जूझ रही होगी।

इतना ही नहीं हमने इंसानी बस्तियां बनाकर वर्षा के जल को भूमि में जाने से भी रोक दिया है, और किसी कृत्रिम तरीके से भी वर्षा के जल का संचय एवं संरक्षण नहीं करते हैं। इस कारण से पेयजल और अधिक तेजी से खत्म हो। हमने अपने घरों गांवों और शहरों के दूषित पानी को भी नदियों और नहरों में छोड़ दिया है, जिस कारण विश्व की अनेक बड़ी नदियां आज

नालों में तब्दील हो गई हैं। अब उन नदियों का पानी ना पीने योग्य बचा है और ना सिंचाई योग्य। अब यहां भारतीय संस्कृति में निहित समाधानओं की बात करें तो भारतीय शास्त्रों और ग्रंथों में पहले ही जल को देवता माना गया है, और यही भाव हमें गंगा, यमुना, ब्रह्मपुत्र, कृष्णा, कावेरी जैसी नदियों को माता तुल्य मानने के लिए प्रेरित करता है। क्योंकि यदि हम नदी को माँ कहेंगे तो माँ के समान उसे सम्मान भी देंगे और उसका संरक्षण भी करेंगे। लेकिन हमने नदियों को भी या तो अपने उपभोग की वस्तु माना है या उसे अंधविश्वास का पर्याय बना दिया है। दोनों ही तरह से हमने उनको केवल और केवल दूषित ही किया है। नदियां जब पहाड़ों और जंगलों से होकर निकलती हैं तो उनके पानी में जड़ी बूटियों और खनिज पदार्थों के औषधीय गुण मिल जाते हैं और क्योंकि नदियों में पानी बर्फ के पिघलने और बारिश से आता है तो उस पानी का PH मान और TDS मान दोनों आदर्श स्तर पर होते हैं। अतः ऐसे औषधीय पानी को पीने या उसमें नहाने से अनेक रोग दूर होते हैं। इसी को हमारे पूर्वजों ने नदी में पाप धोना बताया है, और इसीलिए हम उन्हें देवता तुल्य और माता तुल्य मानते हैं।

प्रकृति में अनावश्यक हस्तक्षेप:-

मानव ने प्रकृति में प्रत्येक दिशा से हस्तक्षेप किया है। फिर चाहे वो वनो का अंधाधुंध कटाव हो या प्रकृति प्रदत्त पदार्थो का अनुचित दोहन हो। जीव जंतुओं के प्राकृतिक आवास को बर्बाद करना हो या पृथ्वी पर हर कहीं कंक्रीट के जंगल खड़े करना हो। भारतीय संस्कृति ने मनुष्य और जंगली जीवों के लिए पृथक-पृथक आवास व्यवस्थित किये हैं। लेकिन बढ़ती हुई आबादी की आवश्यकताओं को पूरा करने लिए मनुष्य ने जीवों के प्राकृतिक आवास में भी सेंध लगा दी है। बड़े पैमाने पर जंगलों को काटकर इमारते बनाई जा रही हैं। ऊँचे पहाड़ों और दुर्गम क्षेत्रों में भी मानव बस्तियां विकसित की जा रही हैं। परिणाम स्वरुप पर्यावरण में बड़ा असंतुलन पैदा हो रहा है। अनेक निरीह जीव-जन्तु या तो मारे जा रहे हैं या वे मानव बस्तियों में घुसकर इंसानों को नुकसान पहुंचा रहे हैं। जीवों की कुछ प्रजातियां तो विलुप्ति की कगार पर पहुँच चुकी हैं। अनेक दुर्लभ प्रजाति के पौधे और जड़ीबूटियां भी विलुप्ति की कगार पर हैं। पहाड़ी क्षेत्रों में अत्यधिक निर्माणकार्य होने से प्राकृतिक आपदाओं का खतरा बढ़ गया है। पहाड़ी क्षेत्रों में आये दिन भूस्खलन होते रहते हैं, जिससे जान माल की भारी क्षति होती है। भारतीय संस्कृति में मनुष्य को प्रकृति में हस्तक्षेप ना करने का स्पष्ट दिशानिर्देश दिया गया है। पुराने समय में मानव बस्ती केवल मैदानी क्षेत्रों में ही बनाई जाती थीं और ऊँचे पहाड़ पर केवल भगवान् का मंदिर बनाया जाता था और इसके पीछे यह तर्क दिया जाता था कि ईश्वर का निवास सबसे ऊपर होता है और मनुष्य ईश्वर से ऊपर अपना घर नहीं बना सकता, लेकिन इसके पीछे मंशा केवल पर्यावरण संरक्षण ही थी। परन्तु वर्तमान में मनुष्य ने ये सभी सीमायें तोड़ दी हैं और आज ऐसा कोई तीर्थ स्थान नहीं है जिससे ऊपर जाकर इंसानी बस्ती ना बसाई गई हो। इसका परिणाम पर्यावरण असंतुलन के रूप में विश्व के सामने है।

शास्त्र और पर्यावरण:-

भारतीय सनातन संस्कृति के सभी शास्त्र:- रामायण, महाभारत, गीता, वायु पुराण, स्कंद पुराण, भविष्य पुराण, वराह पुराण, ब्रह्म पुराण, मार्कंडेय पुराण, मत्स्य पुराण, गरुड़ पुराण, विष्णु पुराण, भागवत पुराण, चारों वेद और उपनिषद पेड़-पौधों और जीव-जंतुओं पर दया करने की सीख देते हैं। प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण और उनके संवर्धन की सीख देते हैं। यदि संपूर्ण विश्व इन शास्त्रों का अध्ययन और अनुकरण करें तो पता चलेगा कि मानव से इनका संबंध बड़ा ही अंतरंग है और किसी भी प्राकृतिक एवं भौतिक समस्या के समाधानार्थ अनेकों सूत्र इनमें भरे पड़े हैं।

भारत में मनाया जाने वाला प्रत्येक त्यौहार फसलों, फलों, फूलों, दालों, अनाजों, जल, मिट्टी, नदियों, पहाड़, पशु, पक्षी जैसी अनेक चीजों को सुरक्षित एवं संरक्षित करने के लिए मनाया जाता है। तथा इन्हें किसी न किसी देवी-देवता की पूजा अर्चना से जोड़ा जाता है। भारतीय संस्कृति में अनेक पशु-पक्षियों को देवी देवताओं के वाहन के रूप में प्रस्तुत किया गया है। जैसे :- श्री दुर्गा का वाहन शेर, भगवान शिव का वाहन बैल, इंद्र देव का वाहन हाथी, गणेश जी का वाहन चूहा, हंस, सर्प, बंदर, भालू आदि ऐसे ही प्रतीक हैं। इससे भारतीय संस्कृति का जीव प्रेमी होने का पता चलता है। गीता में स्वयं भगवान कृष्ण कहते हैं कि मैं पेड़ों में स्वयं पीपल का वृक्ष हूँ, तुलसी का पौधा स्वयं विष्णुप्रिया के रूप में पूज्यनीय है। सन्तान प्राप्ति के लिये बरगद की पूजा की जाती है। हवन यज्ञ में प्रयोग आने वाली समिधाओं जैसे- आम, चन्दन, पीपल, देवदार, बेल, नीबू, धतूरा इनके फल टहनियों, छाल से आहुति दी जाती है। भगवान राम ने दण्डक वन का निर्माण कराया, कृष्ण ने वृन्दावन, पाण्डवों ने खाण्ड-वन, शौनकादि ऋषियों ने नैमिषारण्य वन, इन्दु ने नन्दन वन का निर्माण कराया। तुलसीदास जी वनों से इतने प्रभावित थे कि उन्होंने जीवन काल के चौथे चरण में वनागमन को आवश्यक माना है। मत्स्यपुराण के अनुसार दस कुँओं के बराबर एक बाबड़ी को माना गया है, दस बावड़ियों के बराबर एक तालाब, दस तालाबों के बराबर एक पुत्र, दस पुत्रों के बराबर एक वृक्ष को बताया गया है। शास्त्रों में यह भी बताया गया है कि सौ पुत्रों से उतना सुख नहीं मिलता, जितना एक वृक्ष लगाने से मिलता है। इस सब से पता चलता है कि भारतीय संस्कृति में प्रकृति प्रेम का कितना महत्वपूर्ण स्थान है।

महर्षि कश्यप के सूत्र:-

1. पानी के प्रवाहित स्रोतों को शुद्ध रखा जाये तथा उनके प्रवाह में कम से कम रुकावट आने दी जाय। यदि जन जागरूकता लायी जा सके तो जल स्रोतों को प्रदूषित होने से बहुत अंशों तक बचाया जा सकता है। गन्दे नाले या तो औद्योगिक इकाइयों द्वारा पनपते हैं अथवा मनुष्यों के निस्तार से। जो लोग पानी का लाभ उठा रहे हैं वे उसे शुद्ध रखने की जिम्मेदारी निभायें, तो उपचार कठिन नहीं है।
2. जल प्रवाहों, स्रोतों के आसपास के इलाके में सघन वृक्षारोपण किया जाये। पेड़ों की जड़ों के सहारे पानी जमीन के अन्दर गहराई तक उतरता है। जल प्रवाह के साथ मिट्टी के कटान को भी वृक्षों- वनस्पतियों की जड़ें रोकती हैं। अतः तालाबों, नदियों के तटवर्ती क्षेत्रों में खूब वृक्ष लगाये जायें। यह कार्य जन सहयोग से बखूबी किया जा सकता है।
3. पानी के उपयोग में समझदारी और किफ़ायत बरती जाये। जल प्रवाह, झरने, नदी, नल आदि से पानी किसी पात्र में लेकर उसका उपयोग मितव्ययिता से किया जाये। झरने, नदी, तालाब आदि के पानी से सीधे सफाई करने से उसमें प्रदूषण बढ़ता है। किसी पात्र से लेकर उससे सफाई करने से पानी कम भी खर्च होता है तथा भूमि में बहकर आंशिक रूप से शोधित होकर फिर जल स्रोतों तक पहुँचता है।

नल खोलकर हाथ- मुँह धोने, कुल्ला आदि करने से अधिक पानी बेकार बह जाता है। किसी पात्र में लेकर वही कार्य करने से बहुत कम पानी से कार्य चल जाता है। मोटर आदि वाहनों की सफाई यदि पाइप से पानी डालकर की जाती है तो अधिक पानी व्यय होता है। बाल्टी में मग्गे के द्वारा पानी डालकर कपड़े या ब्रश से साफ किया जाय तो बहुत कम पानी से काम चल जाता है। यह आदतें थोड़े से अभ्यास से ठीक की जा सकती हैं और पर्याप्त पानी निरर्थक बहने से बचाया जा सकता है।

संक्षेप में कहा जाये तो सृष्टि में शायद ही कोई ऐसा प्राकृतिक तत्व हो जिसको भारतीय संस्कृति ने सम्मान ना दिया हो। अतः इसमें तनिक भी संदेह शेष नहीं रह जाता कि यदि वैश्विक स्तर पर भारतीय सनातन संस्कृति द्वारा प्रदत्त सूत्रों और सिद्धांतों का अनुपालन किया जाए तो पर्यावरणीय समस्याओं को समूल नष्ट किया जा सकता है, और संपूर्ण प्राणी जगत को

एक नई ऊर्जा, एक नवीन चेतना प्रदान की जा सकती है। बस जरूरत है तो सिर्फ इन मूल्यों को आत्मसात करने की, इन सिद्धांतों को जीवन में उतारने की।

वृक्षों के महत्त्व को स्पष्ट करती कुछ पंक्तियाँ:-

तरुपुत्रों का वरण करो, ये थोड़े में पल जाते हैं।
निश्चित ही पुत्रों से ज्यादा, पुण्य- सुयश दे जाते हैं।।
मित्र मानकर तुष्ट करो, ये स्वार्थ रहित करते उपकार।
प्राणवायु, आहार आदि के, जीवन में भरते उपहार।।
मातु- पितावत्, श्रद्धापूर्वक वृक्षों का सम्मान करें।
ये विषपायी, औगढ़दानी, जगती का कल्याण करें।।

सन्दर्भ सूची:-

1. शर्मा, पण्डित श्री राम (2011) भारतीय संस्कृति एक जीवन दर्शन, युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा।
2. शर्मा, पण्डित श्री राम (2004) पर्यावरण असन्तुलन - जिम्मेदार कौन? युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा।
3. शर्मा,दामोदर (2004) आधुनिक जीवन और पर्यावरण, प्रभात प्रकाशन, नयी दिल्ली।
4. श्रीमद भगवद गीता – गीताप्रेस, गोरखपुर।
5. उपाध्याय, श्री वीरेश्वर (2001) मनुष्य के अस्तित्व के लिए अनिवार्य हो गई है पर्यावरण की रक्षा, ऑफसेट प्रिंटिंग, शांतिकुंज, हरिद्वार।
6. http://news.awgp.org/editor
7. http://literature.awgp.org/book/bhartiya_sanskruti_ke_aadharbhoot_tatva/v1.1
8. https://hindi.indiawaterportal.org/node/47046
9. https://hindi.webdunia.com/environment-day-special/astrology-and-environment-117060300080_1.html

Dr. Sarita Sharma
Reader in CTE, Ex-Head, Department of Education, Ex-Dean Edu. IASE Deemed University, Sardarshahar, Churu (Rajasthan)

Sandeep Kumar
Research Scholar , (Ph.D. Education) IASE Deemed University, Sardarshahar, Churu (Raj.)